बंगाल में ईस्ट इंडिया कम्पनी का विश्लेषण

डॉ० राजेश कुमार*

भारत मे अंग्रेजों का आगमन को एक नये युग का सूत्रपात माना जा सकता है। सन् 1600 ई. में कुछ अंग्रेज व्यापारियों ने इंग्लैण्ड की महारानी एलिजाबेथ से, भारत से व्यापार करने की अनुमति ली। इसके लिए उन्होंने ईस्ट इण्डिया कम्पनी नामक एक कम्पनी बनाई। उस समय तक पुर्तगाली यात्रियों ने भारत की यात्रा का समुद्री मार्ग खोज निकाला था। उस मार्ग की जानकारी लेकर तथा व्यापार की तैयारी करके, इंग्लैण्ड से सन् 1608 में 'हेक्टर' नामक एक जहाज भारत के लिए रवाना हुआ। इस जहाज के कैप्टन का नाम हॉकिंस था। हेक्टर नामक जहाज सूरत के बन्दरगाह पर आकर रुका। उस समय सूरत भारत का एक प्रमुख व्यापारिक केन्द्र था।

उस समय भारत पर मुगल बादशाह जहाँगीर का शासन था। हॉकिंस अपने साथ इंग्लैण्ड के बादषाह जेम्स प्रथम का एक पत्र जहाँगीर के नाम लाया था। उसने जहाँगीर के राज–दरबार में स्वयं को राजदूत के रूप में प्रस्तुत किया तथा घुटनों के बल झुककर उसने बादषाह जहाँगीर को सलाम किया। चूंकि वह इंग्लैण्ड के सम्राट का राजदूत बनकर आया था, इसलिए जहाँगीर ने भारतीय परम्परा के अनुरूप अतिथि का विशेष स्वागत किया तथा उसे सम्मान दिया। जहाँगीर को क्या पता था कि जिस अंग्रेज कौम के इस तथाकथित नुमाइन्दे को वह सम्मान दे रहा है, एक दिन इसी कौम के वंषज भारत पर शासन करेंगे तथा हमारे शासकों तथा जनता को अपने सामने घुटने टिकवा कर सलाम करने को मजबूर करेंगे।1

उस समय तक पुर्तगाली कालीकट में अपना डेरा जमा चुके थे तथा भारत में व्यापार कर रहे थे। व्यापार करने तो हॉकिंस भी आया था। उसने अपने प्रति जहाँगीर की सहृदयता तथा उदार व्यवहार को देखकर अवसर का पूरा लाभ उठाया। हॉकिंस ने जहाँगीर को पुर्तगालियों के खिलाफ भड़काया तथा जहाँगीर से कुछ विशेष सुविधाएँ तथा अधिकार प्राप्त कर लिए। उसने इस कृपा के बदले अपनी सैनिक शक्ति बनाई।

***ग्राम–लौतन, पोस्ट–मुरौल मुजफ्फरपुर**

पुर्तगालियों के जहाजों को लूटा। सूरत में उनके व्यापार को भी ठप्प करने के उपाय किए तथा फिर इस तरह 6 फरवरी सन् 1663 को बादशाह जहाँगीर से एक शाही फरमान जारी करवा लिया कि अंग्रेजों को सूरत में कोठी (कारखाना) बनाकर तिजारत या व्यापार करने की इजाजत दी जाती है। इसी के साथ जहाँगीर ने यह इजाजत भी दे दी कि उसके राज–दरबार में इंग्लैण्ड का एक राजदूत रह सकता है। इसके फलस्वरूप सर टॉमस रो सन् 1615 में राजदूत बनकर भारत आया। उसके प्रयासों से सन् 1616 में अंग्रेजों को कालीकट तथा मछलीपट्टनम में कोठियाँ बनाने की अनुमति प्राप्त हो गई।

शाहजहाँ के शासन–काल में, सन् 1634 में अंग्रेजों ने शाहजहाँ से कहकर कलकत्ते से पुर्तगालियों को हटाकर केवल स्वयं व्यापार करने की अनुमति ले ली। उस समय तक हुगली के बन्दरगाह तक अपने जहाज लाने पर अंग्रेजों को भी चुंगी देनी पड़ती थी। किन्तु शाहजहाँ की एक पुत्री का इलाज करने वाले अंग्रेज डॉक्टर ने हुगली में जहाज लाने तथा माल की चुंगी चुकाना क्षमा करवा लिया। औरंगजेब के शासन–काल में एक बार फिर पुर्तगालियों का प्रभाव बढ़ चुका था। मुंबई का टापू उनके अधिकार में था। सन् 1661 में इंग्लैण्ड के सम्राट को यह टापू, पुर्तगालियों से दहेज में मिल गया। बाद में सन् 1668 में इस टापू को ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने इंग्लैण्ड के सम्राट से खरीद लिया। इसके पष्चात अंग्रेजों ने इस मुंबई टापू पर किलेबंदी भी कर ली।

सन् 1664 में, ईस्ट इण्डिया कम्पनी की ही तरह भारत में व्यापार करने के लिए फ्रांसीसियों की एक कम्पनी आई। इन फ्रांसीसियों ने सन् 1668 में सूरत में 1669 में मछलीपट्टनम में, तथा सन् 1774 में पाण्डिचेरी में अपनी कोठियां बनाई। उस समय उनका प्रधान था दूमास। सन् 1741 में दूमास की जगह डूप्ले की नियुक्ति हुई। लिखा है–''डूप्ले एक अत्यंत योग्य तथा चतुर सेनापति था। उसके पूर्वाधिकारी दूमास को मुगल शासन के द्वारा 'नवाब' का खिताब मिला हुआ था। इसलिए जब डूप्ले आया तो उसने स्वयं ही अपने को 'नवाब डूप्ले' कहना शुरू कर दिया। डूप्ले पहला यूरोपीय निवासी था जिसके मन में भारत के अंदर यूरोपियन साम्राज्य कायम करने की इच्छा उत्पन्न हुई। डूप्ले को भारतवासियों में कुछ खास कमजोरियां नजर आईं। जिनसे उसने पूरा–पूरा लाभ उठाया।

एक यह कि भारत के विभिन्न नरेषों की इस समय की आपसी ईर्ष्या प्रतिस्पर्धा तथा लड़ाइयों के दिनों में विदेषियों के लिए कभी एक तथा कभी दूसरे का पक्ष लेकर धीरे–धीरे अपना बल बढ़ा लेना कुछ कठिन न था, तथा दूसरे यह कि इस कार्य के लिए यूरोप से सेनाएं लाने की आवश्यता न थी। बल, वीरता तथा सहनशक्ति में भारतवासी यूरोप से बढ़कर थे। अपने अधिकारियों के प्रति वफादारी

का भाव भी भारतीय सिपाहियों में जबर्दस्त था। किन्तु राष्ट्रीयता के भाव या स्वदेष के विचार का उनमें नितांत अभाव था। उन्हें बड़ी आसानी से यूरोपियन ढंग से सैनिक षिक्षा दी जा सकती थी तथा यूरोपियन अधिकारियों के अधीन रखा जा सकता था। इसलिए विदेषियों का यह सारा काम बड़ी सुन्दरता के साथ भारतीय सिपाहियों से निकल सकता था। डूप्ले को अपनी इस महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति में केवल एक बाधा नजर आती थी तथा वह थी अंग्रेजों की प्रतिस्पर्धा।''2

डूप्ले की शंका सही थी। अंग्रेजों की निगाहें भारत के खजाने तथा यहाँ शासन करने पर लगी हुई थीं। इसका एक प्रमाण यह मिलता है कि सन् 1746 में कर्नल स्मिथ नामक अंग्रेज ने जर्मनी के साथ मिलकर बंगाल, बिहार तथा उड़ीसा विजय करने तथा उन्हें लूटने की एक योजना गुपचुप तैयार करके यूरोप भेजी थी।

अपनी योजना में कर्नल स्मिथ ने लिखा था –

"मुगल साम्राज्य सोने तथा चाँदी से लबालब भरा हुआ है। यह साम्राज्य सदा से निर्बल तथा असुरक्षित रहा है। बड़े आश्चर्य की बात है कि आज तक यूरोप के किसी बादषाह ने जिसके पास जल सेना हो, बंगाल फतह करने की चेश्टा नहीं की। एक ही हमले में अनंत धन प्राप्त किया जा सकता है, जिससे ब्राजील तथा पेरु (दक्षिण अमेरिका) की सोने की खाने भी मात हो जाएंगी।"3

"मुगलों की नीति खराब है। उनकी सेना तथा भी अधिक खराब है। जल सेना उनके पास है ही नहीं। साम्राज्य के अंदर लगातार विद्रोह होते रहते हैं। यहाँ की नदियाँ तथा यहाँ के बन्दरगाह, दोनों विदेशियों के लिए खुले पड़े हैं। यह देष उतनी ही आसानी से फतह किया जा सकता है, जितनी आसानी से स्पेन वालों ने अमरीका के नंगे वासिन्दों को अपने अधीन कर लिया था।"4

"अलीवर्दी खाँ के पास तीन करोड़ पाउण्ड (करीब 50 करोड़ रुपये) का खजाना मौजूद है। उसकी सालाना आमदनी कम से कम बीस लाख पाउण्ड होगी। उसके प्रांत समुद्र की ओर से खुले हैं। तीन जहाजों में डेढ़ हजार या दो हजार सैनिक इस हमले के लिए काफी होंगे।"5

जनरल मिल ने कुछ अधिक ही सपना देखा था। किन्तु इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अंग्रेज भी अपने ऐसे ही मनसूबों को पूरा करने में जुटे हुए थे। दरअसल विदेषियों द्वारा भारत को गुलाम बनाने की ये कोषिष, भारतवासियों के लिए बड़ी लज्जाजनक बातें थीं–विशेष रूप से इसलिए कि इस योजना में स्वयं भारत के लोगों ने साथ दिया तथा आगे चलकर अपने पैरों में गुलामी की बेड़ियां पहन लीं।

जनरल मिल ने लिखा है–"अठारहवीं सदी के मध्य में बंगाल के अंदर हमें यह लज्जानक .श्य देखने को मिलता है कि उस समय के विदेषी ईसाई कुछ

हिन्दुओं के साथ मिलकर देष के मुसलमान शासकों के खिलाफ बगावत करने तथा उनके राज को नष्ट करने की शडयंत्र कर रहे थे। अंग्रेज कम्पनी के गुप्त मददगारों में खास कलकत्ते का एक मालदार पंजाबी व्यापारी अमीचंद था। उसे इस बात का लालच दिया गया कि नवाब को खत्म करके मुर्शिदाबाद के खजाने का एक बड़ा हिस्सा तुम्हें दे दिया जाएगा तथा इंगलिस्तान में तुम्हारा नाम इतना अधिक होगा, जितना भारत में कभी न हुआ होगा। कम्पनी के मुलाजिमों को आदेष था कि अमीचंद की खूब खुषामद करते रहो।"6

कम्पनी के वादों तथा अमीचंद की नीयत ने मिलकर, बंगाल के तत्कालीन शासक अलीवर्दी खाँ के तमाम वफादारों को विष्वासघात करने के लिए तैयार कर दिया। उधर कलकत्ते मे अंग्रेजों की तथा चन्द्रनगर में फ्रेंच लोगों की कोठियां बनाना तथा किलेबन्दी करना लगातार जारी था। अलीवर्दी खाँ को इसकी जानकारी थी। फिर जब उसे अमीचंद तथा दूसरे विष्वासघातकों की चाल का पता चला तो उसने उनकी सारी योजना विफल कर दी। किन्तु इन सब घटनाओं से अलीवर्दी खाँ सावधान हो गया तथा पुर्तगालियों, अंग्रेजों तथा फ्रांसीसियों–तीनों कौमो के मनसूबों का उसे पता चल गया।

बंगाल के नवाब अलीवर्दी खाँ को कोई बेटा न था, इसलिए उसने अपने नवासे सिराज–उद्–दौला को, अपना उत्तराधिकारी बनाया था। अलीवर्दी खाँ बूढ़ा हो चला था। वह बीमार रहता था तथा उसे अपना अंत समय निकट आता दिखाई दे रहा था। इसलिए एक दूरदर्षी नीतिज्ञ की तरह अलीवर्दी खाँ ने अपने नवासे सिराज–उद्–दौला को एक दिन पास बुलाकर कहा–"मुल्क के अंदर यूरोपियन कौमों की ताकत पर नजर रखना। यदि स्वयं मेरी उम्र बढ़ा देता, तो मैं तुम्हें इस डर से भी आजाद कर देता अब मेरे बेटे यह काम तुम्हें करना होगा। तैलंग देष में उनकी लड़ाइयाँ तथा उनकी कूटनीति की ओर से तुम्हें होषियार रहना चाहिए। अपने–अपने बादषाहों के बीच के घरेलू झगड़ों के बहाने इन लोगों ने मुगल सम्राट का मुल्क तथा शहंषाह की रिआया का धन माल छीनकर आपस में बांट लिया है। इन तीनों यूरोपियन कौमों को एक साथ कमजोर करने का ख्याल न करना। अंग्रेजों की ताकत बढ़ गई है। पहले उन्हें खत्म करना। जब तुम अंग्रेजों को खत्म कर लोगे तब, बाकी दोनों कौमें तुम्हें अधिक तकलीफ न देंगी। मेरे बेटे, उन्हें किला बनाने या फौजें रखने की इजाजत न देना। यदि तुमने यह गलती की तो, मुल्क तुम्हारे हाथ से निकल जाएगा। "

10 अप्रैल सन् 1756 को नवाब अलीवर्दी खाँ की मृत्यु हो गई। इसके बाद सिराज–उद्–दौला, अपने नाना की गद्दी पर बैठा। सिराज–उद्–दौला की आयु उस समय चौबीस साल थी। ईस्ट इण्डिया कम्पनी की नीतियों ने साजिषों का पूरा

जाल फैला रखा था। अंग्रेज नहीं चाहते थे कि सिराज–उद्–दौला शासन करे। इसलिए उन्होंने सिराज–उद्–दौला का तरह–तरह से अपमान करना तथा उसे झगड़े के लिए उकसाने का काम शुरू कर दिया। सिराज–उद्–दौला जब मुर्षीदाबाद की गद्दी पर नवाब की हैसियत से बैठा तो रिवाज के अनुसार उसके मातहतों को, वजीरों, विदेषी कौमों के वकीलों को, राज–दरबार में हाजिर होकर नजरे प्रस्तुत करना जरूरी था। किन्तु अंग्रेज कम्पनी की तरफ से सिराज–उद्–दौला को कोई नजर नहीं भेंट की गई।

कम्पनी हर हाल में अपने व्यापारिक हितों की रक्षा और उनका विस्तार चाहती थी। कम्पनी 1717 मे मिले दस्तक पारपत्र का प्रयोग कर के अवैध व्यापार कर रही थी जिस से बंगाल के हितों को नुकसान होता था। नवाब जान गया था कि कम्पनी सिर्फ व्यापारी नहीं थी और साथ सिराज–उद्–दौला का नाना अलीवर्दी खाँ मरने से पहले उसको होषियार कर गया था। 1756 की संधि नवाब ने मजबूर की थी जिससे वो अब मुक्त होना चाहता था। कम्पनी खुद ऐसा शासक चाहती थी जो उसके हितों की रक्षा करे। मीर जाफर, अमिचंद, जगतसेठ आदि अपने हितों की पूर्ति हेतु कम्पनी से मिल कर जाल बिछाने मे लग गए। सिराज–उद्–दौला कम्पनी के इस रवैये से नाराज हो गया जिसका परिणाम प्लासी के युद्ध के रूप में सामने आया।

प्लासी का युद्ध 23 जून 1757 को मुर्षिदाबाद के दक्षिण में 22 मील दूर नदिया जिले में गंगा नदी के किनारे 'प्लासी' नामक स्थान में हुआ था। इस युद्ध में एक ओर ब्रिटिष ईस्ट इंडिया कंपनी की सेना थी तो दूसरी ओर थी बंगाल के नवाब की सेना। कंपनी की सेना ने रॉबर्ट क्लाइव के नेतृत्व में नबाव सिराजुद्दौला को हरा दिया था। किंतु इस युद्ध को कम्पनी की जीत नहीं मान सकते क्योंकि युद्ध से पूर्व ही नवाब के तीन सेनानायक, उसके दरबारी, तथा राज्य के अमीर सेठ जगत सेठ आदि से क्लाइव ने षडंयत्र कर लिया था। नवाब की तो पूरी सेना ने युद्ध मे भाग भी नहीं लिया था। युद्ध के फौरन बाद मीर जाफर के पुत्र मीरन ने नवाब की हत्या कर दी थी। युद्ध को भारत के लिए बहुत दुर्भाग्यपूर्ण माना जाता है। इस युद्ध से ही भारत की दासता की कहानी शुरू होती है।

इस युद्ध से कम्पनी को बहुत लाभ हुआ। वह आई तो व्यापार हेतु किंतु बन गई शासक। इस युद्ध से प्राप्त संसाधनो का प्रयोग कर कम्पनी ने फ्रांस की कम्पनी को कर्नाटक के तीसरे और अन्तिम युद्ध मे निर्णायक रूप से हरा दिया था। इस युद्ध के बाद बेदरा के युद्ध मे कम्पनी ने ड्च कम्पनी को हराया था। कम्पनी ने इसके बाद कठपुतली नवाब मीर जाफर को सत्ता दे दी किंतु ये बात किसी को पता न थी के सत्ता कम्पनी के पास है। नवाब के दरबारी तक उसे "क्लाइव का

गधा" कहते थे कम्पनी के अफसरों ने जम कर रिष्वत बटोरी बंगाल का व्यापार बिल्कुल तबाह हो गया था इसके अलावा बंगाल मे बिल्कुल अराजकता फैल गई थी।

प्लासी के युद्ध में जीत से कम्पनी को लाभ स्वरूप प्राप्त हुआ – भारत के सबसे समृद्ध तथा घने बसे भाग से व्यापार करने का एकाधिकार, बंगाल के शासक पर भारी प्रभाव और बंगाल पर कम्पनी ने अप्रत्यक्ष सम्प्रभुता, बंगाल के नवाब से नजराना, भेंट, क्षतिपूर्ति के रूप मे भारी धन वसूली, एक सुनिश्चित क्षेत्र 24 परगना की जागीर का राजस्व मिलने लगा। बंगाल पर अधिकार व एकाधिकारी व्यापार से इतना धन मिला कि इंग्लैंड से धन मँगाने कि जरूरत नही रही, इस धन को भारत के अलावा चीन से हुए व्यापार मे भी लगाया गया। इस धन से सैनिक शक्ति गठित की गई जिसका प्रयोग फ्रांस तथा भारतीय राज्यों के विरूद्ध किया गया। देष से धन निष्कासन शुरू हुआ जिसका लाभ इंग्लैंड को मिला वहां इस धन के निवेष से ही औद्योगिक क्रांति शुरू हुई।

इस घटना से एक नई राजनैतिक शक्ति का उदय हुआ। कम्पनी के हित राजनीति से जुड़ गए और वह प्रभुत्व प्राप्ति में जुट गई। मुगल साम्राज्य के दुर्बलता भी साफ हो गई। कम्पनी को भारत के शासक वर्ग की चरित्र, फूट का पता लग गया। प्लासी के युद्ध के बाद सतारुढ़ हुई मीर जाफर अपनी रक्षा तथा पद हेतु ईस्ट इंडिया कंपनी पर निर्भर था। जब तक वो कम्पनी का लोभ पूरा करता रहा पद पर भी बना रहा। उसने खुले हाथो से धन लुटाया, किंतु प्रषासन संभाल नही सका, सेना के खर्च, जमींदारों की बगावतों से हालत बिगड़ रही थी, लगान वसूली मे गिरावट आ गई थी, कम्पनी के कर्मचारी दस्तक का जम कर दुरूपयोग करने लगे थे वो इसे कुछ रुपयों के लिए बेच देते थे। इस से चुंगी बिक्री कर आमदनी की जाती थी बंगाल का खजाना खाली होता जा रहा था। हाल्वेल ने माना की सारी मुसीबत की जड़ मीर जाफर है, उसी समय मीर जाफर का बेटा मीरन मर गया जिससे कम्पनी को मौका मिल गया था उसने मीर कासिम जो मीर जाफर का दामाद था को सत्ता दिलवा दी। इस हेतु एक संधि भी हुई 27 सितम्बर 1760 को कासिम ने 5 लाख रूपये तथा बर्दवान, मिदनापुर, चटगांव के जिले भी कम्पनी को दे दिए। इसके बाद धमकी मात्र से मीर जाफर को सत्ता से हटा दिया गया मीर कासिम सत्ता में आ गया। इस घटना को ही 1760 की क्रांति कहते है।

संदर्भ सूची :–

1. जॉर्ज ब्लिन, एग्रिकल्चर ट्रेंड, फिलाडेफिया, 1966, पृ. 21.
2. कर्नल स्मिथ का पत्र, फ्रांसिस लॉरेन के नाम
3. वही 4.वही 5.वही
6. जनरल मिल ने अपने उदगार में लिखा

****